नाटक

संस्कृत नाट्य साहित्य अत्यन्त विकसित एवं प्रौढ़ है। संस्कृत साहित्य की अन्य शाखाओं की अपेक्षा नाटकों की लोकप्रियता अधिक रही है। इसे कवित्व की चरम सीमा मानकर आचार्यों ने इसकी महत्ता सिद्ध की है। क्योंकि नाटक रंगमंच पर अभिनीत होते थे, इनकी उपयोगिता सार्वजनिक थी और ये सबके मनोरंजन के साधन बने हुए थे आचार्य भरत ने तो नाटक को 'सार्ववर्णिक वेद' कह कर इसकी सर्वजनोपकारता का महत्त्व प्रदर्शित किया था। संस्कृत साहित्य में नाटकों का लेखन बहुत प्राचीन काल से होता रहा है। और इसके सूत्र वेदों से भी प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद के अनेक संवाद-सूक्तों में नाटक के तत्त्व मिलते हैं। पुरुरवा-उर्वशी संवाद, यम-यमी, इन्द्र, इन्द्राणी, सरमा-पणि, नाट्य-कला का यथेष्ट रूप देखा जा सकता है। रामायण एवं महाभारत में भी नाटक के अनेक उपकरणों का उल्लेख है रामायण के अनेक प्रसंगों में शैलूष नट एवं नर्तक का उल्लेख किया गया है। वाल्मीकि ने कहा है कि जिस जनपद में राजा नहीं रहता वहाँ नट एवं नर्तक सुखी नहीं रहते।

नाराजके जनपदे प्रहष्टनटनर्तका:।

नाटकोत्पति के विभिन्न मत

- *डॉ. रिजवे* ने भारतीय नाटकों की उत्पत्ति का स्रोत 'वीरपूजा' में माना है। इनके अनुसार नाट्य प्रणयन की प्रवृत्ति तथा रुचि मरे हुए वीर पुरुषों के प्रति आहर दिखलाने की इच्छा से जाग्रत हुई। जिस प्रकार ग्रीकदेश में नाटक (ट्रेजडी) का जन्म मृत पुरुषों के प्रति किए गए सम्मान की प्रक्रिया से हुआ उसी प्रकार भारत वर्ष में नाटक वीरपूजा से ही प्रारम्भ हुए। क्योंकि आजकल के प्रचलित नाटकीय उत्सवों के आधार पर नाटक का मूल खोज निकालना साहस का काम है।
- *डॉ. कीथ* डा. कीथ के अनुसार, प्राकृतिक परिवर्तनों को जनता के समक्ष मूर्तरूप से प्रदर्शित करने की अभिलाषा में ही नाटकों की उत्पत्ति का स्रोत विद्यमान है। महाभाष्य में निर्दिष्ट कंसवध नामक नाटक के अभिनव से इस मत को कुछ पुष्टि प्राप्त होती है उनके अनुयायी इस नाटक के अभिनय में रक्तमुख धारण करते थे। डॉ. कीथ का कहना है कि नाटक का वसन्त ऋतु को हेमन्त ऋतु पर विजय दिखलाया ही मुख्य उद्देश्य है। कृष्ण की विजय उद्धित जगत के भीतर चेष्टा दिखलाने वाली जीवनी शक्ति का प्रतीक है।
- *जर्मन विद्वान् पिशेल* नाटकों का उद्भव पुतलिका नृत्य से माना है। उनके अनुसार इसकी उत्पत्ति सर्वप्रथम भारत में ही हुई थी और यहीं से इसका अन्यत्र प्रचार हुआ सूत्रधार तथा स्थापक आदि शब्दों का मूल अर्थ इस मत का पोषण करता है। इन दोनों शब्दों का क्रमश: अर्थ है 'डोरे को पकड़ने वाला और किसी वस्तु को लाकर रखने वाला।
- कुछ विद्वानों ने नाटक की उत्पत्ति 'में पोल नृत्य' से निश्चित है, पश्चिमी देशों में मई का महीना बड़ा ही आनन्द तथा उत्सव का होता है। उस महीने में एक स्थान पर एक लम्बा बाँस गाड़ दिया जाता है। उसके नीचे स्त्रियाँ तथा पुरुष साथ-साथ नृत्य किया करते थे। अन्य विद्वानों में इस मत को ध्यान के योग्य नहीं समझा इन्द्रध्वज उत्सव नेपाल आदि में अभी तक यह प्रचलित है।
- भास के बाद दूसरे नाटककार महाकवि कालिदास हैं, इन्होंने संस्कृत नाटक की समृद्ध हो रही परम्परा को अपनी प्रतिमा के संस्पर्श से आलौकित कर उसे प्रौढ़ता प्रदान की है कालिदास के प्रसिद्ध नाटकों में से शाकुन्तल में इनकी प्रतिभा का चुडान्त निदर्शन हुआ है। भवभूति के पश्चात् एक प्रकार से संस्कृत नाटकों का ज्वलन्त युग समाप्त हो जाता है और ऐसे नाटकों की रचना होने लगी है जो नाम भर के लिए नाटक है, नवी सदी ईस्वी के आरम्भ किया भास का नाटकों, इन नाटकों में नान्दी का अभाव है तथा सुकुमार एवं उद्धत दोनों प्रकार के ह्रास का योग्य है शक्तिभद्र ने 'आश्चर्य चुड़ामणि' नामक नाटक की रचना की जिसमें शूर्पणखा प्रसंग से लंका-विषय एवं सीता की अग्नि परीक्षा तक की रामकथा वर्णित है। इसी शताब्दी के अन्य नाटककारों 'हनुमत्रटक' के रचयिता दामोदार मिश्र एवं राजशेखर हुए। राजशेखर ने 3 नाटक तथा एक सहक 'कर्पूरमंजरी' लिखा। इसने अपने नाटकों में लम्बे-लम्बे वर्णनों का समावेश किया, जो नाट्यकला की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है इनकी प्रतिमा महाकाव्य लेखन के अधिक उपयुक्त थी।
- संस्कृत में रूपक के 10 एवं उपरूपक के 18 भेद किए गए हैं। इन सभी भेदों के आधार पर संस्कृत में विशाल नाट्य साहित्य प्रस्तुत हुआ और प्रत्येक भेद की पृथक्-पृथक् ऐतिहासिक परम्परा रही है। इसमें प्रहसन तथा भाण की पृथक् शाखा अधिक है। संस्कृत का प्राचीनतम् प्रहसन 'मत विलास' है जिसके रचियता महेन्द्र विक्रम (576-600 ई.) थे। अन्य प्रहसनकारों में कविराज शंखधर का नाम प्रसद्धि है। इनका ग्रन्थ का नाम लटकमेलक, नाटक के प्रमुख कवि निम्न प्रकार से हैं।

प्रमुख नाटक रचनाकारों का सामान्य परिचय

प्रमुख नाटक रचनाकारों का सामान्य परिचय निम्नलिखित है

भास

दुर्भाग्यवश भास के जीवन के सम्बन्ध में अभी तक कुछ भी ज्ञात नहीं हो सका है। इनके नाटक बहुत दिनों तक अज्ञानान्धकार में पड़े हुए थे और इनका स्वरूप लोगों को अज्ञात था। बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण के पूर्व तो *भास के सम्बन्ध में कतिपय उक्तियाँ ही प्रचलित थीं जैसे*

- जयदेव के शब्दों में कविता कामिनी का भासों ह्रास कविकुलगुरु कालिदास: था।
- वाक्यपतिराज ने अपने महाकाव्य में भास को 'ज्वलनमित्र' कहा है। कतिपय विद्वान् इस विशेषण की संगति वासवदत्ता की मिथ्या दाह की क्रिया से जोड़ते हैं।
- 'अभिनव भारती' तथा 'शृंगार प्रकाश' में भी भास रचित सुप्रसद्धि नाटक 'स्वप्नवासदत्ता' का उल्लेख है। यथा कचित्क्रीड़ा तथा वासवदत्तायाम् (अभिनव भारती) वासवदत्ते यद्यावतीमस्वस्थां दृष्टुं राज। समुद्रग्रहकंगत:। भास ने अपनी कृतियों में अपने सम्बन्ध में कुछ भी निर्देश नहीं दिए हैं। किन्तु इनके विषय में अनेक किम्वदन्तियाँ प्रचलित हैं। *जिनसे उनके जीवन-वृत्त पर निम्न प्रकार से प्रकाश पड़ता है*
  - इनकी उपाधी 'धावक' थी। आचार्य मम्मट ने अपने 'काव्यप्रकाश' में इनका उल्लेख किया है कि 'श्री हर्ष की रत्नावली आदि नाटिकाओं के प्रणयन में धावक कवि सहायक था और धन दिया गया था।' किन्तु माघ को श्री हर्ष (सातवीं सदी ई.) का समकालीन स्वीकारता कथमपि युक्तिसंगत नहीं है।
  - भास जाति से धोबी थे और उन्हीं का ऊपरी नाम 'घटकर्पर' था। समीक्षा करने पर इस दन्तकथा में भी दम नहीं है, क्योंकि घटकर्पर कालिदास के समकालीन था। सम्राट विक्रम की राजसभा के नवरत्नों में कालिदास और घटकर्पर का नाम आता है।

- एक समय में व्यास और भास के प्रतिष्ठा के लिए झगड़ा हुआ व्यास अपने को श्रेष्ठ और प्रतिभाशाली कवि मानते तथा भास अपने को निर्णय के लिए दोनों के ग्रन्थ अग्नि को अर्पित किए गए। कहा गया है कि व्यास के ग्रन्थों को अग्नि ने भस्म कर दिया। पर भास के नाटकों में 'स्वप्नवासवदत्तम्' अग्नि में जल न सका। राजशेखर ने इसकी पुष्टि की है। भास भी व्यास के समान प्राचीन एवं यशस्वी कवि हैं।
- एक अन्य मत के अनुसार प्राचीन समय में गोत्र के नाम पर व्यक्ति के नामकरण की प्रथा प्रचलित थी। पतंजलि, यौगन्धरायण, आदि नाम गोत्र के आधार हैं। अगस्त्य गोत्र की हेदमोदक शाखा में भास गोत्र है। अतएव भास नाम गोत्र नाम के आधार पर प्रचलित हुआ। भास जाति के ब्राह्मण एवं वर्णाश्रम धर्म के पोषक थे। यज्ञ के प्रति इनकी अपूर्व आस्था प्रकट होती है।
- प्रतिज्ञा पंचरात्र आदि रूपकों के मंगलाचरण में कवि राजा की उपस्थिति को निश्चित रूप से प्रतिपादित नहीं करता। अत: इन रूपकों के मंगल श्लोकों से भास किसी राजसभा में निवास करने वाला राजकवि सिद्ध होता है।
- भास की वैदिक क्रिया काण्ड के प्रति अपार आस्था है। यह धर्मभीरू संकल शास्त्रों का ज्ञाता, हास्य प्रिय, विनीत शिष्ट, गुरुजनों का आज्ञाकारी एवं कुशल भाषाणकर्ता सिद्ध होता है। स्पष्टवादी और राष्ट्रकवि के रूप में भास को माना जा सकता है। भास की रचनाओं से यह सिद्ध होता है कि कवि में देशभक्ति कूट-कूट कर भरी है भास मनुष्य-स्वभाव और प्रकृति के पारखी हैं। ये कर्त्तव्यपरायण पुत्र, निष्ठावान पति एवं सन्तानप्रिय पिता थे। परिवार के प्रति इनकी अपार आस्था थी। भास आशावादी व्यक्ति थे न्याय व स्वतन्त्रता प्रेमी थे। अमात्य, सेना दूत, युद्ध आदि के चित्रणों से भी यह सिद्ध होता है कि भास का सम्बन्ध किसी राजकुल से अवश्य है।
- भास की निश्चित तिथि के विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता विद्वानों ने इनका समय ई. पू. छठी शताब्दी से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी ई. तक स्वीकार किया है।
- भारत के नाम से अब तक 13 नाटक उपलब्ध हुए हैं। इन नाटकों में भास की मौलिकता अनूठी कल्पना शक्ति एवं अदुभत नाट्यकला कुशलता का परिचय मिलता है। विषयानुसार इन सभी 13 नाटकों को *छ: श्रेणी में विभक्त किया जा सकता है*

- **रामकथा पर आश्रित** प्रतिमा, नाटक
- **महाभारत पर आश्रति** पंचरात्र, मध्यम व्यायोग
- **दूत घटोत्कच** दूतवाक्य, उरूभंग
- **भगवत कथात्मक** बालचरित
- **लोककथात्मक** दरिद्र चारूदत्त, अविमारक
- **उदयन कथाश्रित** प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्तम्

शूद्रक

- इनका विरचित 'मृच्छकटिकम्' नाटक है। इसके सम्बन्ध में मृच्छकटिकम् नाटक के प्रारम्भ में कहा गया है कि शूद्रक नाम का राजा अगाधसाव और क्षत्रिय कवि था। यह ऋग्वेद, सामवेद, गणित, कला गायन-वादन, हस्तशिल्प आदि में प्रवीण था। इसने महादेव की तपस्या कर यह ज्ञान प्राप्त किया था। इसने अन्त में अश्वमेध यज्ञ किया और सौ वर्ष दस दिन की अवस्था में इसका देहान्त हो गया।

शूद्रक कहाँ का राजा था इस विषय में अनेक मतभेद हैं

- कल्हण की 'राजतरंगिणी' में शूद्रक का नाम विक्रमादित्य के साथ दिया हुआ है।
- 'स्कन्दपुराण' में यह आन्ध्रभृत्य राजाओं का प्रथम माना गया है।
- 'वेतालपंचविशंति' में शूद्रक की आयु सौ वर्ष की निर्दिष्ट है।
- 'कादम्बरी' में शूद्रक की राजधानी विदिशा बताई गई है।
- 'रामिल सोमिल' ने शूद्रक कथा लिखी थी यह ऐसी दन्तकथा है कि यदि यह ठीक हो तो कालिदास के पूर्व भी शूद्रक का नाम प्रसिद्ध था, ऐसा मानना पड़ता है।

इस प्रकार के अनेक मतभेदों से यही झलकता है कि शूद्रक केवल कल्पित व्यक्ति है, विद्वानों ने ऐतिहासिक सिद्ध करने की चेष्टा की है।

- जीवानन्द विद्यासागर अपनी इस नाटक की भूमिका में कहते हैं कि 'मृच्छकटिकम्' के प्रथम अंक के प्रकार के भाषण में वाणाक शब्द का उल्लेख है और इसमें चाणक्य महेन्द्र, रूद्र आदि नामों का निर्देश दिया है। इसलिए 'मृच्छकटिकम्' का समय राजा रूद्रदामन के पूर्व का नहीं हो सकता है, क्योंकि 'मृच्छकटिकम्' के अष्टम अंक के 34 वे श्लोक में लुब्धेलाओं यह निर्देश रूद्रदामन के उपलक्ष में है। रूद्रदामन का समय 300 ई. के लगभग का माना जाता है। कश्मीर के राजा कनिष्क के समय में जो 'नाणक' मुद्रा प्रचलित थी, उसी का द्योतक 'णाणक' शब्द इसमें भी है।
- शूद्रक का समय वामनाचार्य ने अपनी काव्यालंकार सूत्रवृत्ति में शूद्रकादि रचितेषु प्रबन्धेषु अर्थात् शूद्रक विरचित प्रबन्ध का उल्लेख 'घूतं' हि नाम पुरुषस्य असिंहासन राज्यम् इससे कहा जा सकता है। कि आठवीं सदी ई. से पहले ही 'मृच्छकटिकम्' की रचना की गई होगी। वामन के पूर्ववर्ती आचार्य दण्डी (सातवीं सदी ई.) ने भी काव्यदर्श में लिम्पतीव तमोडङ्गानि मृच्छकटिकम् के इस पद्यांश को अलंकार से निरूपण करते समय उद्धत किया है। मृच्छकटिकम् की रचना सातवीं सदी ई. से पहले ही हुई होगी। अत: मृच्छकटिकम् की रचना मनुस्मृति के अनन्तर हुई मनुस्मृति का रचनाकाल ई. पू. द्वितीय शताब्दी माना जाता है। अत: मृच्छकटिकम् को इससे बाद में ही मानना होगा। शूद्रक की कृति 'मृच्छकटिकम्' 10 अंक में है।

विशाखदत्त

- विशाखदत्त संस्कृत के सुप्रसिद्ध नाटककार कवि हैं अन्य लेखकों की भाँति विशाखदत्त के जीवन का पूर्ण विवरण प्राप्त नहीं होता। इनके दो नाम मिलते हैं। विशाखदत्त एव विशाखदेव। इन्होंने विवरण का प्रामाणिक आधार है। इससे पता चलता है कि विशाखदत्त सामन्त बटेश्वरदत्त के पौत्र थे और इनके पिता का नाम पृथु था। पृथु को महाराज की उपाधि प्राप्त थी और इनके पितामह सामन्त थे।
- सामन्त बटेश्वरदत्त पौत्रस्य, महाराज पदभाक्, पृथुसूनी: कवेर्विशाखदत्तस्य कृति: मुद्राराक्षसं नाम नाटकं नाटकयितव्यम्। (मुद्राराक्षस, प्रस्तावना) विशाखदत्त का जीवन विचित्र अनिश्चिता से युक्त है। ये तो विद्वानों ने अन्त: साक्ष्य और बहि: साक्ष्य के आधार पर विशाखदत्त की जीवन रेखा बनाने का प्रयास किया। पण्डित बलदेव उपाध्याय का अनुमान है कि विशाखदत्त राजपरिवार में उत्पन्न हुए। अत: राजनीति से उनका पूर्ण परिचय स्वाभाविक है। उन्होंने लिखा है 'राजनीति विशेषत:' कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा शुक्रनीति के प्रकाण्ड पण्डित होने के अतिरिक्त विशाखदत्त दर्शन शास्त्र विशेषत: न्याय तथा ज्योतिष के भी पूरे पण्डित थे।

- विशाखदत्त के समय-निरूपण के सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतैक्य नहीं है। 'मुद्रा राक्षस' के भारत वाक्य में चन्द्रगुप्त का उल्लेख है। पर कतिपय प्रतियों में चन्द्रगुप्त के स्थान पर 'दन्तिवर्मा', 'अवन्तिवर्मा', एवं रविवर्मा का नाम मिलता है। पर विद्वानों ने अनुमान लगाया है। कि सम्भवत: अवन्तिवर्मामौखरि नरेश हों, जिसके पुत्र ने हर्ष की पुत्री से विवाह किया था। इसे कश्मीर का भी राजा माना गया हैं, जिसका समय 855 ई. 883 ई. तक का है। डॉ. याकोबी नाटक में उल्लिखितग्रहण का समय ज्योतिषगणना के अनुसार 2 दिसम्बर, 860 मानते हैं तथा उनका यह भी विचार है कि राजा अवन्तिवर्मा के मन्त्री सूर ने इस नाटक का अभिनय कराया था, पर इसके सम्बन्ध में कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता। डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल, स्टेन कोनी तथा श्रीकण्ठ शास्त्री ने इसे 'चद्रगुप्त' द्वितीय का समकालीन माना है, जिसका समय 375 से 413 ई. है।
- विशाखदत्त की एकमात्र प्रसिद्ध कृति 'मुद्राराक्षस', उपलब्ध तथा अन्य कृतियों की भी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनमें 'देवीचन्द्रगुप्त' नामक नाटक प्रमुख है इस नाटक के उद्धरण 'नाट्यदर्पण' तथा शृंगार प्रकाश नामक काव्य शास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त होता है।

भवभूति

- "अस्ति दक्षिणापथे विदर्भेषु पद्मपुरं नाम नगरम्। तत्र केचित् तैतिरीयिण: काश्यपाश्चरणरव: पंक्तिपावना, पंचाग्रेयों धृतव्रता: सोमपीथिन उदुम्वरनामानों ब्रहावादिन: प्रतिवसन्ति तदामुष्यायस्य तत्रभवतो वाजपेयाजिनो महाकवे: पंचम: संगृहितनाम्नो भहगोपालस्य पौत्र: पवित्र-कीर्तेर्नीलकण्ठस्य आत्मसम्भव: श्रीकण्ठपदलांछन पदवाक्यप्रमाणज्ञों भवभूतिर्नाम जातुकर्णीपुत्र: कविर्मित्रधेय अस्माकमित्यत्र भवन्तों विदा कुर्वन्तु'
- ये संस्कृत नाट्य साहित्य में युग प्रवर्तन करने वाले प्रतिभाशाली कलाकार हैं, जो कई दृष्टियों से महाकवि कालिदास को भी पीछे छोड़ देते हैं
  उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।
- भवभूति अपने युग के सशक एवं विशिष्ट नाटककार थे, किन्तु उस युग के आलोचक इनकी प्रतिमा का वास्तविक मूल्यांकन उपस्थित करने में असमर्थ रहे। फलत: कवि के मन में अन्त: क्षोभ की अग्नि दिखाई पड़ती है। वे केवल प्रतिभाशाली कवि ही नहीं थे। अपितु संख्या योग उपनिषद् और मीमांसा प्रभृति विद्याओं में भी निपष्णात् थे। इनके आलोचकों ने इनके सम्बन्ध में कटूक्तियों का प्रयोग किया था। भवभूति ने उन्हें चुनौती दी कि निश्चय ही एक युग ऐसा आएगा जब मेरे समानार्थी कवि मेरी कला का आदर करेंगे।
- भवभूति ने अपना पर्याप्त परिचय अपने नाटकों की प्रस्तावना में दिया है। फलत: इनका जीवन वृत्त अन्य साहित्यकारों की भाँति अन्धकाराच्छत्र नहीं है। इनका जन्म कश्यपवंशी उदुम्बर नामक ब्राह्मण परिवार के घर में हुआ था। ये विदर्भ के अन्तर्गत पद्मपुरं के निवासी थे। इनका कूल 'कृष्ण' यजुर्वेद की तैतिरीय शाखा का अनुयायी था। इनके पिता का नाम नीलकण्ठ एवं माता का नाम जतुकर्णी था। इन्होंने अपना सर्वाधिक विस्तृत विवरण 'महावीरचरित' की प्रस्तावना में प्रस्तुत किया है।
- कहा जाता है कि इनका वास्तविक नाम श्रीकण्ठ था और भवभूति उपनाम था। स्वयं कवि ने भी अपने श्रीकण्ठ नाम का संकेत किया है। इसी प्रकार का परिचय किंचित परिवर्तन के साथ 'मालती माधव' नामक नाटक में भी प्राप्त होता है। इन्होंने अपने गुरु का नाम 'ज्ञाननिधि' दिया है, कहा जाता है कि देवी पार्वती की प्रार्थना में बनाए गए एक श्लोक से चमत्कृत होकर तत्कालीन पण्डित मण्डली ने इन्हें भवभूति की उपाधि प्रदान की थी।

  गिरिजाजा: स्तनौवन्दे भवभूति सिताननौ।
  तपस्वीकां गप्तोऽवस्थमिति स्मेराननाविव।।

इनके टीकाकार वीरराघव ने इस तथ्य का उद्घाटन किया है।

- भवभूति ने नाटकों की प्रस्तावना में अपना समय निर्दिष्ट नहीं किया है। अत: इनका काल-निर्णय विवादास्पद बना हुआ है।
  वाक्यपतिराज कान्यकुब्ज नरेश यशोवर्मा के सभाकवि थे। जिनका समय 750 ई. है। भवभूति भी जीवन के अन्तिम दिनों में यशोवर्मा के आश्रित हो गए थे। 'राजतरंगिणी' में लिखा है कि यशोवर्मा की सभा में भवभूति आदि अनेक कवि हैं। वामन के काव्यालंकार की सभा में पद्य उद्धत है। वामन समय आठवीं सदी का उत्तरार्द्ध था नवीं सदी का प्रारम्भ है। अत: भवभूति का समय सातवी शताब्दी ईस्वी का अन्तिम चरण या आठवीं सदी का प्रथम चरण हो सकता है।
- भवभूति की 3 ही रचनाएँ प्राप्त होती हैं और तीनों ही नाटक हैं 'मालतीमाधव', 'महावीरचरित' एवं 'उत्तररामचरित'।
- **मालतीमाधव** प्रकरण में 10 अंक हैं। जिसे भवभूति ने कल्पित इतिवृत्त को आधार बनाकर वस्तु संविधान किया है। इसमें कवि ने प्रणय-कथा को चुना है। सम्भव है मालती और माधव की इस प्रणय-कथा का संकेत भवभूति को 'बृहत्कथा' से मिला है।
- ***महावीरचरित*** 7 अंकों का नाटक है, जिसमें राम के जीवन की कथा वर्णित है रामायण की विशाल कथा को लेकर नाटककार पूरी तरह उसका प्रदर्शन नहीं कर सकता। भवभूति ने रामायण की कथा को लेकर उसमें अन्वति बनाए रखने के लिए कुछ आवश्यक परिवर्तन किए हैं।
- ***उत्तररामचरित*** तीसरी और अन्तिम कृति है, जो भवभूति के जीवन के प्रौढ़ अनुभवों की देन है। उत्तर रामचरित अंकों का नाटक है, जिसमें राम के जीवन के उत्तर भाग की कथा है इसमें राम के वन प्रत्यागमन पर राजगद्दी पाने से लेकर सीता मिलन तक की सम्पूर्ण कथाएँ कुछ कल्पना प्रसूत घटनाओं के साथ दिखाई गई हैं।

अम्बिकादत्तव्यास

- अम्बिकादत्तव्यास का परिवार मूलत: जयपुर राज्य में रहता था किन्तु इनके पितामह काशी में जाकर बस गए। इनका कृति शिराजविजय से आधुनिक संस्कृत उपन्यास का श्रीगणेश माना जाता है और पण्डित अम्बिकादत्त व्यास को अभिनवबाण की उपाधि से विभूषित किया जाता है। शिवराज विजय में छत्रपति शिवाजी के जीवन-वृत्त को उपन्यास का कथानक बनाया गया है। इसमें मुगल सम्राट औरंगजेब द्वारा हिन्दू धर्म एवं हिन्दू संस्कृति को विनष्ट करने की दुष्प्रवृत्ति के विरुद्ध महाराष्ट्र केसरी शिववीर या शिवाजी के अनाकथ प्रयासों का सफल चित्रण किया गया है। मुगल सम्राट की पुत्री रसनारी या रौशनारा के साथ शिववीर के अदैहिक प्रणय को भी अंकित किया गया है। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है इसके रचयिता पण्डित अम्बिकादत्त व्यास हैं। इनका समय सन् 1985 से 1900 ईस्वी का है।
- इस शिवराजविजय उपन्यास में सुदीर्घ समस्त पदावली के साथ-साथ समास विहीन लघु पदावली की छटा भी प्रस्फुट हुई है। भाषा में संस्कृतेतर तो संस्कृत भाषा में लचीलापन का एक सर्वप्रथम संस्तुत्य प्रयास है।

- चरित्र-चित्रण की दृष्टि से उपन्यास के नायक शिववीर की नैतिक उदात्तता का अप्रिय शौर्य, औदार्य एवं चातुर्य के चित्रण के साथ-साथ मुगल सम्राट की द्युर्तता और विश्वासघात, रघुवीर सौवणी के विष्कलुष प्रणय, रसनारी की आसक्तता और जयसिंह की सफल कूटनीति भी पूर्णतया स्फुट हुई है। वस्तुत: इस उपन्यास में त्याग, तपस्या, कर्त्तव्यनिष्ठा और ध्येय की सम्प्राप्ति के प्रति प्राणों की हवि तक के लिए सर्वथा प्रस्तुति भी चित्रित हुई है, जिसका प्रतीक यह अंश बहुत ही प्रसिद्ध है

  कार्यं वा साधयेयं, देहं वा पातयेयम्

हर्ष

- भारत वर्ष में गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद छठी शताब्दी में कोई प्रतापी शासन नहीं हुआ। सातवीं सती में हर्षवर्धन ने उत्तरी भारत को जीतकर एक विशाल साम्राज्य का निर्माण किया और 50 वर्ष तक शान्ति तथा व्यवस्था बनाए रखी। सम्राट हर्ष के सम्बन्ध में जानकारी का पहला साधन बाणभट्ट का ग्रन्थ है। 'हर्षचरित' में हर्ष के जीवन का काव्यात्मक वर्णन है, किन्तु घटनाएँ प्राय: प्रामाणिक हैं। कादम्बरी में तत्कालीन धार्मिक तथा सामाजिक जीवन पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। हर्ष की 3 नाटिकाएँ हैं जिनमें तत्कालीन भारतीय समाज की झाँकी मिलती है। हर्ष के बाँसखेरा तथा मधुबन के दो ताम्रलेख और सोनपत की ताँबे की मुहरें भी ऐतिहासिक महत्त्व की हैं।
- इन सबसे महत्त्वपूर्ण साक्ष्य ह्वेनसांग तथा इत्सिंग नामक चीनी यात्रियों की भारत यात्रा का विवरण है उन्होंने नालन्दा के प्रसिद्ध विहार में शिक्षा पाई। हर्षवर्धन के साथ उनकी बड़ी घनिष्ठता थी। वे धार्मिक एवं कुशाग्र बुद्धि वाले थे। अत: उनका वर्णन बड़ा सजीव है। मधुवन के ताम्रपत्र के अनुसार हर्ष के पूर्वज थानेश्वर के शासक थे। पुष्यभूति ने इस वंश की नींव डाली थी। सम्भवत: वह गुप्तों के अधीन सामन्त था। हर्ष के केवल चार पूर्वजों का उल्लेख मिलता है- नरवर्धन, राज्यवर्धन, आदित्यवर्धन तथा प्रभाकरवर्धन।
- बाण के अनुसार, प्रभाकर वर्धन ने अपने पड़ोसी राजाओं के अनेक युद्ध किए। उनकी रानी यशोमती से राज्यवर्धन (द्वितीय) हर्षवर्धन तथा राज्यश्री का जन्म हुआ। राज्यश्री का विवाह कन्नौज के राजा ग्रहवर्मा से हुआ। राज्यवर्धन (द्वितीय) 605 ई. में हूणों का दमन कर रहा था, तभी प्रभाकरवर्धन की मृत्यु हो गई।
- वह गद्दी पर बैठा ही था कि मालवाधिपति ने कन्नौज के राजा को मारकर राज्यश्री को बन्दी बना लिया। राज्यवर्धन ने मालवा के नरेश को हरा तो दिया किन्तु गौड नरेश शशांक ने धोखे से उसकी हत्या कर दी। राज्यश्री कैद से निकल भागी। हर्ष ने कन्नौज और थानेश्वर दोनों को सँभाला और कन्नौज को राजधानी बनाया तथा सम्राट-पद के अनुरूप विरुद (उपाधि) धारण किए गए उसने अपार धन दान दिया।
- भारत में विक्रमादित्य, शूद्रक हाल आदि अनेक विद्या के उपासक राजा हो चुके हैं, परन्तु उन सबमें महाराज हर्ष या हर्षवर्धन अद्वितीय हैं। महाकवि जयदेव ने इनको अपने प्रसन्नराघव नाटक में कविता कामिनी का 'हर्ष' कहा है- हर्षो हर्ष:। ग्यारहवीं सदी ई. में उत्पन्न होने वाले सोड्ढल में अपनी 'उदयसुन्दरी कथा, नामक चम्पू काव्य में सरस्वती हो हर्ष प्रदान करने के कारण श्री हर्ष की प्रशंसा श्रीहर्ष कहकर की है।'

  श्री'' हर्ष इत्यवनिवर्तिषु पार्थिवेषु।
  नाम्नव केवलमजायत वस्तुतस्तु
  गीहर्ष एष निजसंसदि येन राजा
  सम्पूजित: कनककोटिशतेन बाण:।।

- हर्ष की मृत्यु के बाद इत्सिंग नामक चीनी बौद्ध परिवाज्रक अपने धर्मग्रन्थों को पढ़ने की इच्छा से भारत में आया। उसने अपने यात्रा विवरणात्मक ग्रन्थ में महाराजा हर्ष को नागानन्द नाटक का रचयिता होना स्पष्ट ही लिखा है। इतिहास के अनुसार इस प्रसिद्ध सम्राट तथा कान्यकुब्ज के राजा श्री हर्ष ने 606 ई. से लेकर 648 ई. तक शासन किया था। अत: इसके समय ईसा की सातवीं सदी का पूर्वार्द्ध है।
- श्री हर्ष की तीन रचनाएँ हैं- प्रियदर्शिका, रत्नावली एवं नागानन्द इनमें प्रियदर्शिका और रत्नावली नाटिकाएँ हैं और नागानन्द नाटक है।
  - प्रियदर्शिका में 4 अंक हैं तथा इसका नामकरण इसकी नायिका 'प्रियदर्शिका' के नाम पर किया गया है। इसकी कथावस्तु 'कथासरित्सागर' एवं 'बृहत्कथामंजरी' में प्राप्त होती है।
  - रत्नावली श्रीहर्ष की दूसरी रचना है। संस्कृत की इस प्रसिद्ध नाटिका के अनेक उद्धरण एवं उदाहरण नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं, इसमें 4 अंक हैं जिनमें भी वत्सराज उदयन एवं रत्नावली के प्रणय प्रसंग का वर्णन है,
  - नागानन्द नाटक में 5 अंक हैं। यह किसी बौद्ध अवदान के ऊपर आश्रित है प्रथम अंक में जीमूतकेतु का आश्रम में जाना तथा उनके पुत्र जीमुतवाहन का भी पितृदत्त राज्य का परित्याग कर वही सेवार्थ जाना तथा गौरी के मन्दिर में मलयवती के वीणा वादन से उसके हृदय में अनुराग का संचार वर्णित है।

भट्टनारायण

- भट्टनारायण के एकमात्र उपलब्ध कृति वेणीसंहार है। नाटक की प्रस्तावना में उन्होंने अपना नाम मृगराजलक्ष्मा भट्टनारायण दिया है। इसके अतिरिक्त उनका कोई परिचय उनकी कृति से प्राप्त नहीं होता। मृगराज भट्टनारायण की उपाधि थी। क्षितीश वंशावली चरितम् के अनुसार वे कान्यकुब्ज निवासी शाण्डिल्य गोत्रोत्पन्न सारस्वत ब्राह्मण थे। बंगराज सेनवंश के प्रर्वतक राजा आदिसूर के निमन्त्रण पर वे कान्यकुन्ज से बंगाल जा बसे।
- आदिसूर ग्यारह राजाओं के राजवंश के संस्थापक थे ऐसी मान्यता है कि आठवीं शताब्दी के मध्य में पालवंश के सिंहासनारूढ़ होने के पूर्व उन राजाओं ने शासन किया कोनी महोदय ने अनुमान किया है कि वंश मगध के गुप्तों से अभिन्न है। क्योंकि मगध के माधव गुप्त के पुत्र आदित्यसेन कान्यकुब्ज से स्वतन्त्र हो गया था। डॉ. कीथ ने इससे यह निष्कर्ष निकाला है कि आदिसूर ही आदित्यसेन है। जो 671 ई. में जीवित था। फिर भी भट्टनारायण आश्रयदाता आदिसूर का यह स्थितिकाल अभी अनुमान की ही वस्तु है।
- परम्परा के अनुसार भट्टनारायण सुप्रसिद्ध टेगोर वंश के आदिपुरुष थे विद्वानों अत साक्ष्य के आधार पर भट्टनारायण को वैष्णव माना है। भट्टनारायण का गहन पाण्डित्य नाट्य शास्त्र का पूर्ण अभिज्ञान और महाभारत से उनका परिचय तो वेणीसंहार से सिद्ध ही है। कवि को पुराण आदि ग्रन्थों का भी ज्ञान था सांख्य योग एवं वेदान्त दर्शन वैदिक कार्मकाण्ड और यज्ञ प्रक्रिया से कवि सुपरिचित हैं। वह राजशास्त्र (अर्थशास्त्र) का भी अच्छा ज्ञाता है।
- वेणीसंहार के भारत वाक्य से पता चलता है कि ये किसी सहृदय राजा के आश्रित रहे होंगे स्टेन कोनों के मत से आदिसूर आदित्यसेन था जिसका समय 617 ई. है।

- रमेशचन्द्र मजूमदार भी माधव गुप्त के पुत्र आदित्य सेन का समय 675 ई. के लगभग मानते हैं जो शक्तिशाली होकर स्वतन्त्र हो गया था। आदिसूर के साथ सम्बद्ध होने के कारण भट्ट नारायण का समय सातवीं सदी का उतरार्द्ध माना जा सकता है विल्सन महोदय ने वेणीसंहार की रचना-काल आठवीं नवीं सदी ई. माना है।
- भट्टनारायण की केवल एक ही रचना उपलब्ध होती है और वेणीसंहार नामक नाटक यह नाटक महाभारत की एक महत्त्वपूर्ण घटना पर आश्रित है। द्रोपदी के द्वारा वेणी को बाँधना दु:शासन के घोर अपमान से सन्तप्त होकर द्रोपदी यह भंयकर प्रतिज्ञा करती है कि दु:शासन और दुर्योधन के मारे जाने पर ही वह 'अपनी वेणी बाँधेगी' इसी घटना की पूर्ति में महाभारत का पूरा कथानक यह विन्यासित किया गया है वेणीसंहार रूपक में कुल छ: अंक हैं।

पंडिता क्षमाराव

- पण्डिता क्षमाराव का जन्म 4 जुलाई, 1890 ई. को पुणे में हुआ था। इनके पिता शंकर पाण्डुरङ्ग पण्डित संस्कृत के ख्यातिप्राप्त विद्वान् थे। क्षमाराव की तीन वर्ष की अवस्था में ही उनके पिता का देहान्त हो गया।
- अत: इनकी बाल्यावस्था अत्यन्त कष्ट में बीता। क्षमा तथा उनकी छोटी बहन तारा दोनों ही असाधारण प्रतिभा से सम्पन्न थे। बीस वर्ष की आयु में अध्ययन पूर्ण होने के पूर्व ही क्षमा का विवाह मुम्बई के प्रख्यात चिकित्सक डॉ. राव से हो गया। उन्होंने पति के साथ यूरोप का भ्रमण किया था तथा फ्रेंच, जर्मन तथा अंग्रेजी भाषाओं का अभ्यास भी किया था। भारत, फ्रांस तथा जर्मनी में उन्होंने कई बार अपनी पुत्री लीला के साथ महिला युगल चैम्पियनशिप जीती थी। नवम्बर, 1953 ई. में उनके पति की मृत्यु हो गई।
- क्षमा देवी स्वदेशी तथा असहयोग आन्दोलन में भाग लेना चाहती थीं, परन्तु गृहस्थ धर्म के कारण गाँधीजी ने उन्हें इसकी आज्ञा नहीं दी फिर भी इन विषयों पर उन्होंने अपनी लेखनी चलाकर देशसेवा की। 22 अप्रैल, 1954 ई. को भगवद्गीता का पाठ करने के अनन्तर उन्होंने प्राण त्याग दिए।
- कर्तृत्त्व पण्डिता क्षमाराव की संस्कृत काव्य-रचनाएँ निम्नलिखित हैं 'सत्याग्रहगीता', 'कथापञ्चकम्', 'शङ्करजीवनाख्यानम्', 'मीरालहरी, 'उत्तरसत्याग्रहगीता', 'श्रीतुकारामचरितम्', 'श्रीरामदासचरितम्', 'ग्रामज्योति', 'श्रीज्ञानेश्वरचरितम्', 'स्वराज्यविजयम्', 'मीरालहरी'।

वी राघवन

- वी राघवन भारतीय साहित्य संस्कृति और कला के विश्वविख्यात विद्वान् थे। वे अनेक वर्षों तक मद्रास विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष रहे। उन्हें पद्म भूषण और संस्कृत के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार सहित कई पुरस्कार प्राप्त हुए और 120 से अधिक पुस्तकों और 200 लेखों के लेखक थे। उन्होंने संगीत और सौन्दर्य शास्त्र पर संस्कृत में कई किताबें लिखीं। वर्ष 1963 में उन्होंने वाक्य और नाट्य दोनों के साथ काम करने वाले 63 अध्यायों में संस्कृत काव्य के सबसे बड़े जाने-माने काम भोज के अंग पत्रिका का सम्पादन और अनुवाद किया। इस काम और उसकी टिप्पणी के लिए उन्होंने उन्होंने 1966 में संस्कृत के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार जीता था।
- वर्ष 1996 में उन्हें प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू फैलोशिप से सम्मानित किया गया। इसके बाद हविर्डओरिएंटल श्रृंखला की मात्रा 73 के रूप में प्रकाशित किया गया था। उन्होंने संस्कृत में रवीन्द्रनाथ टैगोर का पहला नाटक वाल्मीकि प्रतिभा में अनुवाद किया जो वाल्मीकि के एक दस्यु से एक कवि मे परिवर्तन के बारे में है उन्होंने एक प्राचीन संस्कृत नाटक की खोज की और सम्पादित उदयता राघवम् मयूरराज द्वारा की गई थी। वी राघवन भारतीय विषयों में विश्वविख्यात् विद्वान् थे।

श्रीधर भास्कर वर्णेकर

- डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर संस्कृत के महान् विद्वान् तथा प्राध्यापक हैं। आप नागपुर विश्वविद्यालय में संस्कृत विभागाध्यक्ष के पद पर से सेवानिवृत हुए हैं तथा अब भी संस्कृत भाषा एवं साहित्य की समाराधना में तत्पर हैं। 31 जुलाई 1976-20 अप्रैल, 2000 संस्कृत के विद्वान् तथा राष्ट्रवादी कवि थे। उनका जन्म नागपुर में हुआ था।
- इनकी रचनाओं में 'शिवराज्योदयम्' एवं 'विवेकानन्दविजयम्' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'शिवराज्योदयम्' जहाँ एक महाकाव्य है वहाँ 'विवेकानन्दविजयम्' एक नाटक है।
- शिवराज्योदयम महाकाव्य में 68 सर्ग हैं। शिवाजी के हाथों स्वराज्य स्थापना का पुनीत कृत्य किस प्रकार सम्पन्न हुआ यही इस महाकाव्य का। क्षात्रधर्म, परनारी में मातृत्व की भावना सर्वधर्म समभाव माता द्वारा शिशु शिवाजी की शिक्षा, परतन्त्रता के प्रति घृणा शत्रुदमन शास्ति खान का मर्दनसिंहगढ़विजय और राज्याभिषेक आदि इसके प्रमुख वर्ण्य प्रसंग हैं। इस महाकाव्य में अल्ला काफिर तथा बादाम जैसे शब्दों को भी संस्कृत भाषा में ग्रहण किया गया है। जिससे युग की माँग पूरी होती है। 'विवेकानन्दविजयम्' में विवेकानन्द के चरित्र के विविध पहलुओं को सरल संस्कृत में प्रस्तुत किया गया है।